नागार्जुन की कविता

सत्य

सत्य को लकवा मार गया है
वह लम्बे काठ की तरह
पड़ा रहता है सारा दिन, सारी रात
वह फटी-फटी आंखों से
टुकुर-टुकुर ताकता रहता है सारा दिन, सारी रात
कोई भी सामने से आए-जाए
सत्य को सूनी निगाहों में जरा भी फर्क नहीं पड़ता
पथराई नजरों से वह यों ही देखता रहेगा
सारा-सारा दिन सारी-सारी रात

सत्य को लकवा मार गया है
गले से ऊपर वाली मशीनरी पूरी तरह बेकार हो गयी है
सोचना बन्द
समझना बन्द
याद करना बन्द
याद रखना बन्द
दिमाग की रगों में जरा भी हरकत नहीं होती
सत्य को लकवा मार गया है
कौर अंदर डाल कर जबड़ों को झटका देना पड़ता है
तब जाकर खाना गले के अंदर उतरता है
ऊपर वाली मशीनरी पूरी तरह बेकार हो गयी हे
सत्य को लकवा मार गया है

वह लंबे काठ की तरह पड़ा रहता है
सारा-सारा दिन, सारी-सारी रात
वह आपका हाथ थामे रहेगा देर तक
वह आपकी ओर देखता रहेगा देर तक
वह आपकी बातें सुनता रहेगा देर तक
लेकिन लगेगा नहीं कि उसने आपको पहचान लिया है
जी नहीं, सत्य आपको बिल्कुल नहीं पहचानेगा
पहचान की उसकी क्षमता हमेशा के लिए लुप्त हो चुकी है
जी हां, सत्य को लकवा मार गया है
उसे इमर्जेंसी का शाक लगा है
लगता है, अब वह किसी काम का न रहा
जी हां, सत्य अब पड़ा रहेगा
लोथ की तरह, स्पन्दनशून्य मांसल देह की तरह। ■

पृष्ठ 1 का शेष

मैं टाइगर नहीं...

पूरी होती नज़र नहीं आई तो उनमें रोष का भड़कना स्वाभाविक ही है।

अपने दो घंटे के विलाप में उन्होंने यह भी बताया कि जब कोई एसएचओ लगा होता है तो वह लूटने-खाने में इतना व्यस्त रहता है कि कभी छुट्टी तक लेना पसंद नहीं करता। उन्होंने पूरा जोर दे कर कहा कि क्यों नहीं आधी फोर्स छुट्टी पर चली जाती, इस दौरान जनता तो लुटने से बचेगी। लूटेंगे तो कम से कम अपने घर वालों को ही लूटेंगे ....।

इसी तरह की ना जाने कितनी ऊल जुलूल बातें उन्होंने अपने इस सम्बोधन में कहीं। सोचने की बात यह है कि जिस फ़ौज का जनरल ही गीदड़ हो जाये तो उस फ़ौज की क्या स्थिति होगी? वे तो फिर खरगोश ही हो जायेंगे जो कुत्तों से भी छिपते फिरेंगे? यह बात काफी हद तक सही है कि पुलिस महकमे में निकम्मे, नालायक, भ्रष्ट और लुटेरे भरे पड़े हैं, परन्तु इसका हल विलाप करने से तो नहीं निकलेगा। उन्हें इसका समाधान करने के लिये विधान ने अथाह शक्तियां प्रदान की हैं। अपनी संवैधानिक शक्तियों का इस्तेमाल करने की बजाये इस तरह से सार्वजनिक विलाप करके वे न केवल पूरे महकमे का बेड़ा गर्क कर रहे हैं, बल्कि खुद भी हंसी के पात्र बन रहे हैं।

अपने खुद के बारे में दलाल साहब को जो ज्ञान अब प्राप्त हुआ है, क्या इसका आभास इनको पहले से जरा भी नहीं था? करीब दो साल पहले उन्होंने क्या सोच कर डीजीपी लगने के लिए घर-घर जा कर लॉबिंग की थी? क्या उन्हें उस वक्त इस बात का पता नहीं था कि डीजीपी का पद हथियाने के लिये वे जिन लोगों से सिफारिश करा रहे हैं, वही सब लोग गोश्त में से अपना हिस्सा भी लेंगे ही? वास्तव में हो भी यही रहा है। डीजीपी डमी बन कर रह गये हैं, उनके अधिकारों का प्रयोग वे सब लोग कर रहे हैं जिनकी कहीं कोई जवाबदेही नहीं है। अपने खुद के रचे इन हालात में अब उनके पास विलाप करने के अलावा बचा ही कुछ नहीं। इसलिये वे अब जल्द से जल्द हरियाणा छोड़ कर केन्द्र में जाने की फ़िराक में हैं। जानकारों के मुताबिक फ़िलहाल उनकी निगाह बीएसएफ के उस पद पर है जो 9 जुलाई को खाली होने वाला है, लेकिन उस पद को पाना इतना सरल भी नहीं और सम्भाल पाना तो इनके बस का कतई नहीं।

जजों के रिश्तेदारों...

लेकिन इस नियम को पक्का कानूनी स्वरूप नहीं दिया गया। इसके चलते सरकार एवं सरकार के रिश्तेदार जजों के ऊपर तबादले का दबाव बना कर अपने निहित हितों को साधने लगे। इसकी आड़ में जजों की एकता ने सरकार पर दबाव बना कर यह तय करा लिया कि सुप्रीम कोर्ट के पांच वरिष्ठ जजों की कोलिजियम की सिफ़ारिश के बिना किसी का तबादला न किया जाये। बस फ़िर क्या था चल निकला जजों का भाईचारा - तू मेरी पीठ खुजा, मैं तेरी खुजाऊं।

छोटे अधिकारियों पर तो अब भी काफ़ी हद तक यह कानून लागू है कि उन्हें उनके गृह ज़िले में तैनात न किया जाये। भारतीय प्रशासनिक एवं पुलिस सेवा के अधिकांश अधिकारी दूसरे राज्यों से आते हैं, तो फ़िर जजों को दूसरे राज्यों में जाने में तकलीफ़ क्यों होती है? कारण बड़ा स्पष्ट है, जिसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। अब जो मुख्य न्यायाधीश भविष्य से इस प्रथा को समाप्त करने की बातें कर रहे हैं, वह कोरी लफ्फाज़ी के सिवा कुछ भी नहीं है। यह सब भी इसलिए करना पड़ रहा है ताकि इस डूबती न्याय व्यवस्था में जनता-जनार्दन का विश्वास बना रहे, न्याय के नाम पर चल रही इस दुकानदारी के विरोध में लोग सड़कों पर न उतर आयें। अपनी इसी दुकानदारी को बचाये रखने के लिये व्यवस्था के ये संरक्षक समय-समय पर इस तरह की बाजीगरी करते रहते हैं।

■ विशेष प्रतिनिधि

बुश और ओबामा...

नेता हैं जो राष्ट्रपति के पद तक पहुंच सके हैं। पर इससे क्या होता है? काम तो उन्हें अमेरिकी साम्राज्यवादी ढांचे में ही करना है। इस ढांचे में काले-गोरे के बीच कोई फर्क नहीं है। रंग से कुछ भी नहीं होता। सवाल है, आज अमेरिका जिस आर्थिक संकट में फंसा हुआ है, उससे वह उसे कैसे उबारेंगे? ओबामा के पास इसका कोई उत्तर नहीं है। यह तो आने वाला समय बतायेगा कि वे इराक-अफगानिस्तान व ईरान आदि के बारे में क्या रुख अपनाते हैं, पर इजरायल और फिलीस्तीन के संदर्भ में उन्होंने जो कुछ कहा है, इससे संकेत यही मिलते हैं कि वे बुश की वर्तमान नीतियों को जारी रखेंगे। कश्मीर के संबंध में भी उन्होंने जो बयानबाजी की है, उससे स्पष्ट है कि दूसरे के फटे में पांव डालने से अमेरिका बाज नहीं आयेगा, भले ही खतरा स्वयं उस पर मंडरा रहा हो। सोवियत संघ के पतन के बाद अमेरिकी साम्राज्यवादियों को यह लगा कि अब उन्हें चुनौती देने वाला कोई नहीं रहा और उन्होंने ग्लोबलिज़्म और एक ध्रुवीय दुनिया की बात शुरू कर दी। इसका परिणाम यह हुआ कि भारत जैसे विकासशील देशों के पूंजीपति वर्ग ने अपना स्वार्थ इसी में देखा कि वे विश्व साम्राज्यवादी व्यवस्था से नाभिनाल बद्ध हो जायें। लेकिन गत एक दशक के वैश्विक घटनाक्रमों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि पूरी दुनिया पर अपना दबदबा कायम करने का दावा करने वाले अमेरिकी साम्राज्यवादी कितने भ्रम में थे। उल्लेखनीय है कि लैटिन अमेरिका के देशों ने ही अमेरिकी साम्राज्यवाद को चुनौती देनी शुरू कर दी। लाख धमकाने के बावजूद उत्तरी कोरिया ने परमाणु शक्ति हासिल कर ली। विश्व बाज़ारवादी अर्थव्यवस्था में चीन का जैसा उभार हुआ, उसे देखते हुए एकध्रुवीय विश्व की बातें बकवास ही लगती हैं। यह सच है कि दुनिया कभी एकध्रुवीय नहीं होती। हां, दुनिया के ताकतवर देशों के बीच शक्ति संतुलन किसी न किसी पक्ष में भारी बना रहता है। सोवियत पतन के बाद शक्ति संतुलन अमेरिका के पक्ष में अवश्य हुआ, पर आज वैसी बात नहीं है। रूस भी अब ताकतवर देशों की जमात में शामिल होता जा रहा है। रूस, चीन एवं कुछ यूरोपीय देश अमेरिका के ध्रुव में नहीं हैं। एक महाशक्ति के रूप में उभरने का दावा कर रहा भारत जरूर अमेरिका के साथ गठबंधन कर रहा है। परमाणु करार पर समझौता कर भारतीय शासक वर्ग ने देश की संप्रभुता को खतरे में डाल दिया है। पर इसका खामियाजा उसे भुगतना पड़ेगा।

अमेरिका की वर्तमान व्यवस्था को उसका आंतरिक संकट ही ले डूबेगा। यद्यपि इस प्रक्रिया में काफी समय लगेगा, पर इसके संकेत तेजी से मिल रहे हैं। अमेरिकी शासकों के पास व्यवस्था के आंतरिक संकट से निबटने का कोई विकल्प नहीं है। बुश हो या ओबामा, एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं जैसे अपने यहां अटलबिहारी वाजपेयी अथवा मनमोहन सिंह। व्यवस्थागत स्तर पर ये पूंजीपतियों के ही प्रतिनिधि हैं, 90 प्रतिशत मेहनतकश अवाम के नहीं। इसी प्रकार ओबामा भी बुश की ही तरह साम्राज्यवाद के प्रतिनिधि हैं जो पतनशील है और जिसका अंत अवश्यंभावी है। ■

पाठकों से

पाठक ही हमारे प्रतिनिधि और संवाददाता हैं। उनसे आग्रह है कि अपने क्षेत्र व आस-पास की समस्याएं हमें लिख भेजें। हम उन्हें प्रकाशित करेंगे। इससे उनके समाधान में मदद मिल सकती है। पत्र हमें निम्नलिखित पते पर भेजें : -

संपादक, मजदूर मोर्चा

1 डी/2 बी पी, हार्डवेयर चौक, एन.आई.टी, फरीदाबाद

मजदूर मोर्चा यहां से प्राप्त करें : -

1. दीक्षित न्यूज एजेंसी, ओल्ड फरीदाबाद चौक
2. फरीदाबाद और पलवल बस, रेलवे स्टेशन के बुक स्टॉल
3. प्रिंट फोर्ट, नेहरू ग्राउण्ड, निकट टेलीफोन एक्सचेंज फरीदाबाद

नोटिस

सर्वसाधारण को सूचित किया जाता है कि थाना छांयसा, बल्लबगढ़ में चार-पांच सफेदे के वृक्षों को दिनांक 19-11-08 को प्रात: 11 बजे नीलाम किया जायेगा। अत: इच्छुक खरीददारों से अनुरोध है कि वे ठीक समय पर आ कर बोली लगायें।

प्रेम सिंह
थाना प्रभारी, छांयसा
दिनांक 14-11-08

पाठक मंच

मैं हाल ही में **मज़दूर मोर्चा** का नियमित पाठक हुआ हूं। जो धार इसके समाचारों में होती है, हिन्दी के आज के किसी भी बड़े दैनिक में नहीं है। सम्पादक की निर्मम लेखनी के सामने राजा-प्रजा समान है, बल्कि जितने ऊंचे ओहदे के नेता-मंत्री एवं अधिकारी, उतनी ही प्रखरता से सम्पादकीय लेखनी इन पर वार करती है। किसी को नहीं बख्शती। असल में यही सच्ची पत्रकारिता है। आज जहां बड़े-बड़े दैनिकों के पत्रकार अपने स्वार्थों के लिए नौकरशाहों के सामने दुम हिलाते हैं और किसी भी विसंगति का विरोध नहीं कर पाते, वहीं मजदूर मोर्चा बड़ी निर्भीकता से प्रश्नों की झड़ी लगाता है, फिर चाहे राज्य के सुल्तान सामने हों या जिला पुलिस कप्तान हों, कोई विधायक हो या कोई और। आठ पृष्ठों के कलेवर में साहित्य के लिए भी स्थान है, साहित्य के विगत पुरोधाओं को स्मरण करना भी इसका नित्य नियम है। यह सुखद है कि आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, गणेशशंकर विद्यार्थी और विष्णु राव पराड़कर की परम्परा आज भी जीवन्त है। हां, बच्चों और महिलाओं के लिए भी सामग्री हो, मौलिक रचनाओं को भी स्थान मिले, कलेवर बढ़े और मूल्य भी दो रुपये कर दिया जाए तो इसके पाठक बढ़ेंगे। सम्पादक की निष्कंप लेखनी को प्रणाम।

- किशोर कुमार कौशल, फतेहपुर बिल्लौच

पाठक प्रतिक्रिया निम्न पते पर भेजे :-
संपादक, 'मजदूर मोर्चा' 1 डी/2 बी पी हार्डवेयर चौक, एनआईटी, फरीदाबाद